शब्द-ब्रह्म
E - ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 जून 2016
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

'जल टूटता हुआ' उपन्यास में ग्राम्य जीवन

डॉ. रूपाली दिलीप चौधरी
पु.ओ. नाहटा महाविद्यालय
भुसावल जि. जलगाँव, महाराष्ट्र, भारत

शोध संक्षेप

हिंदी उपन्यास साहित्य में आंचलिक उपन्यासों की समृद्ध परम्परा है। इन उपन्यासों में भारतीय ग्राम्य जीवन का सच्चा चित्र उपस्थित हुआ है। देश की आजादी के पूर्व गाँवों के विकास के जितने दावे किये गए थे, वे दस-पंद्रह साल बीतते न बीतते धराशायी हो गए। जब उपन्यासकारों ने अपनी दृष्टि गाँवों की ओर घुमाई, तो उनका हृदय करुणा से चीत्कार कर उठा। अंचल विशेष को लेकर साहित्यकारों ने अपनी लेखनी चलाई। ऐसे उपन्यासों में पात्र विशेष के स्थान पर पूरा अंचल ही पात्र की भूमिका में उपस्थित हो गया। प्रस्तुत शोध पत्र में वरिष्ठ उपन्यासकार रामदरश मिश्र के प्रसिद्द उपन्यास 'जल टूटता हुआ' का विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तावना

श्री रामदरश मिश्र हिन्दी के उन कवि कथाकारों में से हैं जो अपने सर्जन में सदैव भारतीय ग्राम चेतना से जुडे रहे हैं। उनका अधिकांश रचना संसार उनके ग्राम्य सानिध्य का साक्षी है।गोरखपुर जिले का एक अविकसित या पिछडा हुआ गांव तिवारीपुर इस उपन्यास की मूल कथावस्तु की आधार -भूमि है।. इस गांव के परिवेश में कुछ और भी गांव पडते हैं जैसे भाटपुर,सिंहपुर,खानपुर, सोनइचा आदि.ये सारे गांव बहुत पास-पास एक-एक दो - दो मील के अंतर से बसे हैं।.अतः प्रसंगानुसार केन्द्रीय कथा के सूत्र इन गाँवों तक लम्बाये हुए मिलते हैं।.ये सारे गांव कुल मिलाकर पांच मील के विस्तार में फैले हुए हैं।.सारी कथा इसी विस्तार में घूमती है और हमें स्थानीय जीवन की वास्तविक पहचान कराती है।

जल टूटता हुआ में ग्राम्य जीवन

यह उपन्यास स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारतीय गांव के सम्बन्धों तथा मूल्यों के तनाव, विघटन एवं उसके जीवन संघर्षो एवं व्यथा की कथा है।1 आजादी के पांच साल तक लोगों ने धैर्यपूर्वक उसके सुपरिणामों की प्रतीक्षा की।.सुग्गन मास्टर के मन में एक तस्वीर थी। आजादी के बाद शताब्दियों का अज्ञान, गरीबी, बेकारी, सबके सब नष्ट हो जायेंगे और एक नयी भोर की नयी तस्वीरें लहलहाते खेत, बाढ की छाती पर दौड़ती हुई सड़कें, अभयदान की मुद्रा में खडे अस्पताल प्रेम के रस से सींचे हुए देश के गांव-गांव से उठते हुए समवेत कंठों के गान,दूर-दूर तक फैली हुई जडता की चट्टानों को बेध-बेध कर जगह-जगह से झरते हुए ज्ञान और विद्या के झरने ...2 जिसके कारण यहां के सामाजिक जीवन का कायाकल्प हो जायेगा, पर दिन गुजरते गये और जैसे-जैसे प्रजातंत्र के प्रभाव गांवों का स्पर्श करते गये, वैसे-वैसे ये सपने खण्ड-खण्ड हो कर छितराने लगते हैं।.पंचवर्षीय योजनाओं के नाम पर विकास और निर्माण का जैसा बदरूप सामने आया और चुनाव पद्धति के नाम पर जो कुछ इस देश में चला तथा चल रहा है उसने कुछ

ऐसा विषैला वातावरण सरजा कि जिसमें तिवारीपुर जैसे अनेक गाँवों का दम घुटने लगा।.उनका जीना दूभर हो गया अर्थात उनकी जिन्दगी का जल टूटने लगता है।.गरीबी और अभावों में तो पहले ही सुक्खम-दुक्खम कट रहा था, ऊपर से राजनीति और उससे अद्भुत मूल्यहीनता का वज्रघात.सर्वत्र स्वार्थ, षडयंत्र और शोषण की सरगर्मियाँ।.

तिवारीपुर भी एक अजीब गांव है।.समस्याओं का पूरा अजायबघर कहा जा सकता है इसे।.किसिम-किसिम के लोगों और उनसे जुडी समस्याओं से हमेशा धधकता रहनेवाला यह गांव एक पल को भी चैन की सांस नहीं ले पाता है। यहां जमींदार हैं, सेठ-साहूकार हैं , यहां ब्राह्मण क्षत्रिय हैं , हरिजन-कहार हैं , किसान-मजदूर हैं , पढे-बेपढे भले-बुरे सभी तरह के लोग हैं।.इनमें नेता हैं और उनके टोले भी, गुण्डे हैं और उनके लठैत भी,.चोर हैं, बदमाश हैं, लुच्चे है.कुल मिलाकर यहां वह सब कुछ आपको मिल जायेगा जो एक भारतीय गांव-जवार में होना चाहिए.और फ़िर इन सबसे जुडी हुई समस्याएं हैं , बेशुमार समस्याएं.घर-घर में किसी -न- किसी कारण से आग लगी हुई है।. बेटा, बाप पर आंखे तरेर रहा है , तो भाई, भाई पर हाथ उठा रहा है।.पूरा गांव आपसी रंजिश का शिकार है और स्वार्थ की लडाई में लगा हुआ है। सबसे बडी समस्या तो यही है।.अलावा इसके यहां दहेज और गरीबी की समस्या हैं , मारपीट और हत्याओं की समस्या है , प्रेम और व्यभिचार की समस्या है, बेकारी और काहिली की समस्या है, ऊंच -नीच और शोषण की समस्या है।

आजादी के बाद जैसे ही पंचायती राज का विचार गांव में पहुंचा कि गांव का रंग बदलने लगता है और पंचायतों के चुनाव निकट आने पर यहां दांव पेच , षडयंत्र और मूल्यहीनता की राजनीति का आरंभ हो जाता है।.इस चुनाव ने गांव के जल के इतना हिलोरा कि पेंदी की सारी कीचड़ ऊपर आ गई और पूरा पानी उससे सन गया।. कोई आदमी ऐसा नहीं बचा जो इस कीचड़ से अछूता रहा हो।.पूरा गांव जैसे हिल उठा है, रामकुमार सतीश से मिल रहा है, फेंकू बाबा कुंजू को लिये वहां पहुँच जाता है।.जग्गू हरिजन, झिलमिट तेली, रघुनाथ सभी मिल रहे है वहां. दीनदयाल, दलसिंगार को लेकर महावीर से मिल आये हैं, मास्टर सुग्गन को सहेज आये हैं और अब चले गये हैं बाबू महीपसिंह के यहां-हर आदमी यहां का अपनी गोटी फिट करने में जुटा है।3 चुनाव की राजनीति ने गांव को , गांव नहीं रहने दिया, बल्कि भूतखाने में बदल दिया है।. भले लोगों की तो बात ही छोडिये पुलिस का दरोगा तक तौबा कर गया है। गांव से. चुनाव की हिलोरों से हिलकोरते इस गांव की बदसूरती के अनेक चित्र इस उपन्यास में देखने को मिलेंगे, पर यहां कुंजू के एक चुनावी भाषण का अंश ही पर्याप्त है, जो गांव के यथार्थ को हमारे सामने रखने के लिए उजागर करता है।.कुंजू का यह कथन अकेले कुंजू का नहीं है। यह देश के उस आम आदमी का कथन है जो लगातार आजादी के बाद से चुनाव की राजनीति का शिकार होता आ रहा है।.अपने भाषण में वह कहता है,

“पंचायत राज कायम होने वाला है , इसमें अब पंचों को सरकार की ओर से मजिस्ट्रेट के अधिकार दिए जाएंगे.। इसीलिए जो अब तक ब्रिटिश सरकार के पिठू जमींदार, मुखिया और दलाल रहे हैं वे इस बहती गंगा में हाथ धोना चाहते हैं। वे आज देशभक्त हो गये हैं।. वे पंच-सरपंच बनकर अपना उल्लू सीधा करने को और लोगों से बदला लेने की सोच रहे हैं।.पंच बनने के लिए तरह-तरह की बुरी चालें चलते हैं।.कहीं

किसी का खेत कटवा रहे हैं , कहीं किसी को व्यभिचार में फंसवा रहे हैं , कहीं और तरह से बदनाम कर रहे हैं।- जब अभी से ये लोग तरह-तरह के पापों के रास्ते अपना रहे हैं, तो पंच सरपंच बनने पर क्या करेंगे? यह आपको सोचना है...4 पंचायती राज की यह काली छाया गांव पर कब से मंडरा रही है ? सतीश गांव में रात के अंधियारे में खडी फसलें कटती देखकर कहता हैः पंचायत की शुरूआत भी नहीं हुई कि ये सब इन्साफ शुरू हो गये।. महीपसिंह को देखो और देखो इस दलाल दीन दयाल को .आजादी के दुश्मन हैं ये , जनता के दुश्मन हैं ये , मगर देखो, अधिकार पाने के लिए कब से- कब से पैंतरे बदल रहे हैं. 5 सारा गांव जानवर हो गया है। इस पंचायत के चुनाव को लेकर.गरीब मारा जा रहा है।.उसका न कल कोई था , न आज ही कोई है।. ये गन्दे जानवर कल भी राज करते थे और आज भी राज करने के लिए हाथ-पांव मार रहे हैं।.डाढ में आदमी का खून जो लगा है।6 मास्टर सुग्गन,जिस पर देश की भावी पीढ़ी के निर्माण का दायित्व है और जिसे पिछले तीन महीनों से तनख्वाह नहीं मिली है , जिन्दगी के तमाम अभावों से घिरा हुआ है।. नहीं चाहते हुए भी जमींदार महीपसिंह की मिजाजपूर्सी में लगा हुआ है क्योंकि वे कांग्रेस के नेता हैं, जिला बोर्ड के सदस्य हैं और उसे डर है कि कहीं भाटपुर से उसका स्थानांतरण किसी दूर के स्कूल में न हो जाये. अपने छोटे -छोटे स्वार्थ एवं जीवन की अकिंचन सुविधाओं के कारण यह राष्ट्र-निर्माता बुरी तरह एक बंधी-बंधी जिन्दगी जीने के लिए विवश है.और अन्त में एक टूटन और निराशा का शिकार होता है।. यह पात्र पूरे उपन्यास में मूक और तटस्थ बना रहता है। अकेलेपन और असम्मान की जिन्दगी पड़ती है।.सोशलिस्ट रामकुमार गांव की जिन्दगी में जहर घोलने के लिए किसी सीमा तक उत्तरदायी कहा जा सकता है। एक पढ़ा-लिखा आदमी, जिससे अपेक्षा थी कि वह गांव को सही दिशा में आगे बढने की प्रेरणा देगा, अपने स्वार्थों के कारण बिक जाता है।.परिणाम यह होता है कि ग्रामीणों में शिक्षा और समाजवाद दोनों के प्रति अविश्वास पैदा हो जाता है।.महीपसिंह और दीनदयाल तो जन्मजात गन्दी मछलियाँ हैं , जो तिवारीपुर के जीवन जल को गंदला बनाने में लगी हुई हैं।.ऊपर से नेता , पुलिस तथा सरकारी तंत्र ने मिलकर लोगों का जीवन और भी मुश्किल कर दिया. । कोढ़ तो गांव को पहले ही मिला था , ऊपर से यह खाज भी।.रोगी लहूलुहान न होगा तो फिर क्या होगा ? नेताओं को गांव के विकास से कोई सरोकार नहीं है।.वहां प्रतिवर्ष बाढ़ आ रही है।. फसलें चौपट हो रही हैं , गांव भुखमरी और दारिद्र्य में बुरी तरह बजबजा रहा है, अस्पताल के अभाव में गांव का आदमी असमय ही दम तोड़ रहा है।.शिक्षा के लिए पर्याप्त स्कूल नहीं है और जो हैं, उनमें वर्षों से जरूरी साधनों का अकाल पड़ा है।.पटवारी , दरोगा और हाकिम सबके सब लाश पर टूटने वाले गिद्धों का रूप ले चुके हैं, पर एम.एल.ए. कालीप्रसाद पाण्डे के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती।.उन्हें अपने ही हितों से मतलब है। जीवन के प्रत्येक स्तर पर साजिशों से भरा यह गांव प्रतिपल गर्त की ओर बढ़ता जा रहा है.

कुछ पुरातन सामाजिक संदर्भ आज भी गांव की जिन्दगी के लिए नासूर बनकर वहां की यातनाओं में वृध्दि कर रहे हैं।.इनमें सबसे पहले आती है वर्णभेद और जातिप्रथा की समस्या.ब्राहमण तथा अन्य उच्च वर्ग के लोग आज भी निचली जातियों के साथ वैसा ही

क्रूरतापूर्ण-अमानुषिक व्यवहार कर रहे हैं। जैसा कि वे शताब्दियों पहले किया करते थे।.हमारी ग्राम-व्यवस्था में आज भी जमींदार हैं, महाजन हैं तथा इसके साथ अन्य कई शोषक शक्तियाँ वहां सक्रिय हैं, जो हमेशा निचले वर्गों को दबाये रखने में विश्वास करती हैं।.तिवारीपुर का हरिजन-समाज आजादी के बाद भी यातनाओं की पुरातन परमपराओं से मुक्त नहीं हुआ है।.जमींदारी-प्रथा खत्म करने , ग्राम-पंचायतों को कुछ अधिकार देने और चुनाव-प्रणाली के माध्यम से सबको मताधिकार प्रदान करने मात्र से गाँवों की दशा में कोई क्रांतिकारी परिवर्तन आ जायेगा तथा वहां गांधीजी की कल्पना साकार हो जायेगी, यह विचार उक्त ग्राम संदर्भ में पूरी तरह गलत साबित हुआ है।.गांव का अधिकारहीन टूटा हुआ जमींदार आज भी वहां प्रभावशाली है.आज भी वहां महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है.

निष्कर्ष

कहा जा सकता है कि जल टूटता हुआ के आंचलिक जीवन की खुली हवाओं के सौन्दर्य को स्वातंत्र्योत्तरकालीन राजनीति की कडुवाहट के कुहरे ने बुरी तरह लील लिया है।.प्रजातंत्र, चुनाव-पध्दति और वोट के नाम पर प्राप्त यह ग्रामराज्य की विधायक राजनीति अपने भीतर इतनी कल्पना संभवतः किसी ने नहीं की होगी।.यह विधायक राजनीति क्या गांव और क्या शहर जहाँ भी पहुंची है , वहां का जीवन आज जातिवाद, वैमनस्य, ईर्ष्याभाव, फूट और स्वार्थ की कीच में गले-गले तक धंसा हुआ है।.आज के वातावरण में रामराज्य को आदर्श मानकर चलने वाली यह राजनीति शोषण , दमन और स्व-हितों को साधने का सर्वाधिक कारगर साधन हो गई है।. इसकी आंच में जीवन की सहज संवेदना और आत्मीयता के स्रोत सूखते जा रहे हैं और ऐसा लगता है कि मनुष्य की जीवन शक्ति ही समाप्त होती जा रही है।. जिन्हें त्यागी और जनसेवी समझकर लोग चुनाव जितवाते रहे ,वह सारी की सारी जमात ही दगाबाज निकल गई।.उन लोगों के लिए अपना चुनाव क्षेत्र मन-बहलाव के एक पिकनिक स्पॉट से ज्यादा कीमत नहीं रखता है।.वे लगातार अपने पद या ओहदे को भुनाने में लगे हैं।.सतीश की स्थिति की यह भयावहता विचलित करती है: ...ओह पूरा देश खाने - पीने में लगा है , पता नहीं क्या होगा ?7

राजनीति की यह हवा ही कुछ ऐसी बही है कि जिसने अंचल के जन-जन की मानसिकता को प्रभावित किया है।.इसके प्रभाव ने न अफसर को छोड़ा है न छोटे कर्मचारी को। .इसकी लपेट से न नेता बच पाये हैं न सार्वजनिक कार्यकर्ता।.सबके सब आस्थाहीन और आदर्शहीन जीवन जीने के लिए प्रतिबध्द हैं और दूसरों को भी उसके लिए प्रेरित कर रह हैं।.आज गाँवों में उनकी आवाज काम करती है जो छली हैं, राजनीति के जाल लिये घूमते हैं, बदमाश हैं, पैसेवाले हैं,. स्कूल हैं, चाहे गांव,चाहे देश सभी जगह गुण्डई भर गई हैं, गुण्डे राज्य करते हैं।8

कथाकार ने गाँवों के इस दर्द को, उनके मन की इस वेदना को निराशा और मायूसी को एक तटस्थ दृष्टि से सफलता के साथ आकलित किया है।.यहां पाठक के सामने अंचल ही प्रमुख हो कर रह गया है।. जीवन और समस्याएं ही उसके लिए महत्वपूर्ण हो कर रह गई हैं।. एक आंचलिक के रूप में जल टूटता हुआ का कथाकार यहां पूरी तरह सफल रहा है।. पर आंचलिक कथाकार ग्राम - यथार्थ की इस विभीषिका में भी निराश नहीं होता है।.इन तमाम विपरीत स्थितियों में भी वह आशा की एक डोर

से बंधा होता है , जिसके सहारे वह समूची मानवता को प्रकाश की ओर बढ़ने की प्रेरणा देता है।.उसमें साहस और शक्ति का संचरण करता है।.जल टूटता हुआ का कथाकार भी उपन्यास के अन्त में इसी आशा का संदेश देता है।. उसके एक महत्वपूर्ण पात्र सतीश के कथन में कि वहां सब कुछ टूट रहा है, मूल्य टूट रहे है, सत्य टूट रहा है, कोई किसी का नहीं, सभी अकेले हैं, एक-दूसरे के तमाशाई - मगर नहीं एक नया गांव भी बन रहा है , वह है किसानों -मजूरों का. 9 यही आशा की डोर प्रतिबिंबित हो रही है.

गांव के इस घने-घटाटोप अंधियारे में भी सतीश जो एक दमकती किरण देख रहा है, जिसका मूल है जगपतिया, बदमी और लवंगी के विद्रोह में।. सतीश का पंचायत चुनाव में जीतना और उसके सामने महीपसिंह जैसे गलत ताकत का पराभूत होना ही इस बात की साक्षी है कि जो सत्य की नींव पर खड़े हैं, मूल्यों की रक्षा के लिए जूझ रहे हैं और जिनके पास निस्वार्थ सेवा एवं त्याग की पूंजी है। उनके आगे एक न एक दिन गलत ताकतों को झुकना ही पड़ता है।. सतीश के पास एक संकल्प समन्वित शक्ति है जो उसे हर समय प्रकाश की ओर बढ़ने की प्रेरणा देती है।.सुग्गन मास्टर से एक स्थान पर चर्चा करते हुए उसने जो कुछ कहा उसमें उसकी यही शक्ति, यही जिजीविषा व्यक्त हो रही है, "अंधकार में प्रकाश की खोज मेरा उद्देश्य रहा है,कई बार गिरा हूं,अंधकार में सना हूं, लेकिन उसमें से निकला हूं प्रकाश पाने की तड़प लेकर. मैंने पतन और बेबसी को अपना स्वभाव नहीं बनने दिया. 10 उपन्यास के अंत में अपने कलेक्टर भाई को देख गांव वालों में उपजे सहज विस्मय का शमन करते हुए उसका यह कहना कि - जिस दिन इस गांव में वह कलेक्टर होकर लौटेगा, मैं समझूंगा मेरा भाई मुझसे छिन गया.। 11 इसमें भी उसकी यही जिजीविषा बोल रही है।.उसका विश्वास है कि जीवन की सार्थकता स्वार्थों से ऊपर उठकर उसके सार्वजनिक बने रहने में ही है।.यही वह वास्तविक तत्व है,सत्य है जो टूटते हुए मनुष्य, समाज और मूल्यों को बचा सकता है।.उन्हें परस्पर जोड़े रख सकता हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1.जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, प्रस्तावना
2. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 02
3. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 194
4. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 199
5. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 202
6. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 202
7. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 280
8. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 269
9. जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 258
10.जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 152
11.जल टूटता हुआ, रामदरश मिश्र, पृष्ठ 383